नाभिकीय भारतः रणनीति और ऑपरेबिलिटी के बीच खिसकती दूरी
Nuclear India: The Slip Between the Cup of Strategy and the Lip of Operability

गौरव कम्पानी
Gaurav Kampani
September 9, 2013

तीन महीने पहले भारत के पूर्व विदेश सचिव और राष्ट्रीय सुरक्षा परिषद सलाहकार बोर्ड के वर्तमान समन्वयक श्याम सरण ने भारत की ऑपरेशनल नाभिकीय क्षमता के आलोचकों को सार्वजनिक रूप से जवाब देने का असामान्य-सा कदम उठाया. ये आलोचक एक लंबे अरसे से भारत की ऑपरेशनल क्षमता की अनेक तकनीकी और संगठनात्मक कमियों को दूर करने में शासन में उत्तरोत्तर आने वाली सरकारों की अक्षमता का उल्लेख करते रहे हैं और इसे अपने इस विश्वास का आधार मानते हैं कि आखिर क्यों भारत का नाभिकीय हमला मात्र प्रतिष्ठा का एक उद्यम ही है. इन दावों का प्रतिरोध करते हुए सरण का कहना था कि दिल्ली की ऑपरेशनल नाभिकीय क्षमता बहुत मज़बूत है. दो (एक पूर्व और एक वर्तमान) राष्ट्रीय सुरक्षा सलाहकारों (एनएसए) के दावों में अपना सुर मिलाते हुए सरण ने प्रतिष्ठा के तर्क को खारिज कर दिया और इस बात पर बल दिया कि वास्तविक राष्ट्रीय सुरक्षा मानक के संदर्भ में भारत के नाभिकीय संकल्प की जड़ें बहुत गहरी हैं.

सरण और आलोचक दोनों ही सही हैं, लेकिन आंशिक रूप में ही. आलोचकों ने भारत की ऑपरेशनल क्षमता की भारी कमियों की ओर ठीक ही ध्यान आकृष्ट किया है, लेकिन उनके इस आग्रह में कि नाभिकीय हथियारों के प्रतीकात्मक पक्षों के प्रति भारत की सनक के कारण अनेक कमियाँ सामने आ गयी हैं, इस बात की अनदेखी हो गयी है कि भारत की तकनीकी और संगठनात्मक क्षमता में पिछले दशक में बहुत विकास भी हुआ है. इसी प्रकार सरण ने भारतीय सेना की अनेक ऑपरेशनल चिंताओं को लेकर भारत की नाभिकीय शक्ति का बेहद सकारात्मक मूल्यांकन भी किया है. ये चिंताएँ हैं, तकनीकी विश्वसनीयता, सिविलियन और सैन्य अधिकारियों के बीच संस्थागत समन्वय और आंतर-सैन्य संगठनात्मक सहयोग. कुल मिलाकर ये तीनों चिंताएँ ही भारत की नाभिकीय शक्ति की सबसे बड़ी कमज़ोरी बन जाती है.

तकनीकी विश्वसनीयता

विश्लेषक आम तौर पर भारत के हथियारों के ज़खीरे को विश्वसनीयता के मानदंड पर बहुत-ही कम आँकते हैं. विश्वसनीयता का सीधा-सादा सा अर्थ है वह सांख्यिकीय संभावना, जिससे हथियार निर्धारित विशिष्टियों के अनुरूप चलाये जा सकें. नाभिकीय मुखास्त्रों के मामले में इसका अर्थ है वह सुनिश्चितता जिससे कि इन मुखास्त्रों का वांछित नतीजा निकले और डिलीवरी सिस्टम (विमान और प्रक्षेपास्त्रों) के मामले में वह संभावना जिससे कि वे निर्धारित लक्ष्यभेदन कर सकें. अंततः हथियारों की विश्वसनीयता से ही सेना की प्राणघातक क्षमता का निर्धारण होता है. यही वह मुख्य परिवर्तक है, जिससे सेना के आकार का निर्धारण किया जाता है.

इस बात के विश्वसनीय प्रमाण हैं कि सन् 1998 में भारत के ताप नाभिकीय हथियारों के डिज़ाइन का निष्पादन स्तरीय नहीं था. इस प्रमाण से यह भी पता चला है कि ताप नाभिकीय डिवाइस के बूस्टेड फ़िज़न ट्रिगर का निष्पादन मानक से भी नीचे था. केवल एक ही हथियार का निष्पादन निर्बाध था, जो हीरोशिमा टाइप का साधारण हथियार था. परंतु भारत के नाभिकीय प्रतिष्ठान का दावा है कि भारत के नाभिकीय हथियार बिल्कुल ठीक-ठाक हैं और इन हथियारों में उनके अधिकाधिक प्राणघातक ताप नाभिकीय और बूस्टेड फिज़न कुज़िन्स के साथ-साथ फ़िज़न मुखास्त्र भी शमिल हैं. हो सकता है कि भारतीय वैज्ञानिक गौरव के कारण ऐसा समझते हों या मूर्ख बनाने के लिए ऐसा कहते हों या फिर वे गलतफ़हमी के शिकार हो गये हों, लेकिन अगर ऐसा नहीं है तो भारतीय सेना की योजना की बुनियाद बहुत कमज़ोर है.

मुखास्त्रों की विश्वसनीयता की समस्या के साथ-साथ भारत की अग्नि सीरीज़ के प्रक्षेपास्त्र छोड़ने की विफलता की दर 20-40 प्रतिशत है. यह कच्ची गणना मात्र परीक्षण के लॉन्च के आँकड़ों पर आधारित है. उड़ान के परीक्षणों में कई चीज़ें शामिल हैं, जैसे बूस्ट-फ़ेज़ स्पिन, स्टेज सैपरेशन, री-ऐंट्री, मुखास्त्रों का निष्पादन और परिशुद्धता. इनमें से हरेक कोटि के आँकड़े सार्वजनिक क्षेत्र में उपलब्ध नहीं हैं. फिर भी यदि सभी चीज़ों पर विचार किया जाए तो हमें सही ढंग से उम्मीद करनी चाहिए कि सब-सिस्टम भी विफल ही होंगे. ओवरटाइम और बार-बार उड़ानों का परीक्षण करके विश्वसनीयता की समस्याओं को सुलझाया जा सकता है. परंतु भारत की वैज्ञानिक एजेंसियों का आग्रह है कि पूरे स्तर पर लॉन्च करने के बजाय ज़मीन पर ही कंप्यूटर सिमुलेशन और उपकरणों व सब-सिस्टमों का परीक्षण विश्वसनीयता की समस्याओं को सुलझाने का अधिक सस्ता तरीका है. भारतीय सेना इससे सहमत नहीं है, लेकिन वैज्ञानिक एजेंसियों पर अपनी बोली लगाने के लिए दबाव डालने में वे असमर्थ हैं.

सिविलियन और सैन्य संस्थागत सहयोग

तकनीकी विश्वसनीयता की बात अगर छोड़ भी दी जाए तो भी सिविलियन और सैन्य एजेंसियों के बीच संस्थागत असहयोग नाभिकीय ऊर्जा के निर्विघ्न ऑपरेशनल ऐमप्लॉयमैंट के मार्ग में बहुत बड़ी बाधा बनी रहती है. शांति काल के दौरान दो वैज्ञानिक एजेंसियाँ, भाभा परमाणु अनुसंधान केंद्र (बीएआरसी) और रक्षा अनुसंधान व विकास संगठन (डीआरडीओ) अलग-अलग नॉन फ़िज़ल ट्रिगर एसेम्बलियों और फ़िज़ल कोर पर नियंत्रण रखती हैं, जिनसे परमाणु हथियार बनाये जाते हैं. सशस्त्र सेनाएँ डिलीवरी सिस्टम्स का संरक्षण करती हैं. संकट के समय ऐलर्ट करने और युद्ध के समय इन सभी उपकरणों को समन्वित शक्ति के रूप में फ़्यूज़ करने के लिए कार्यविधि बनी हुई है.

आश्वस्त होने के लिए नियंत्रण की यह विभाजित प्रणाली एक बहुत बड़ा निष्क्रिय सुरक्षा संबंधी नवोन्मेष है. इससे नाभिकीय हथियारों को अनधिकृत हाथों में जाने से रोका जा सकता है, लेकिन शांति काल में जो व्यवस्था कारगर होती है ज़रूरी नहीं कि वह व्यवस्था युद्ध के समय भी कारगर रहे. प्रसिद्ध जर्मन रणनीतिकार क्लॉज़विट्ज़ ने एक बार कहा था कि जो चीज़ सबसे सरल होती है, युद्ध के समय उसका निष्पादन सबसे कठिन होता है. दबाव में नाभिकीय ऊर्जा को एसेम्बल करना बिल्कुल सरल नहीं हो सकता. भारत के संदर्भ में दो अलग-अलग एजेंसियाँ अलग-अलग स्थानों से मुखास्त्रों

की एसेंबली को समन्वित करेंगी. डिलीवरी सिस्टम्स को शांतिकाल के गुप्त ठिकानों से ले जाकर लॉन्च साइट पर साथ-साथ डिप्लॉय किया जाएगा. वैज्ञानिक और सैन्य दल मिलकर डिलीवरी सिस्टम्स से हथियारों को जोड़ेंगे. ये तमाम गतिविधियाँ हज़ारों नहीं तो सैंकड़ों मील की दूरी पर ही संपन्न होंगी. हथियारों के ज़खीरे के अलग-अलग उपकरणों को और उनसे संबद्ध दलों को रेल, सड़क और वायुमार्ग से अलग-अलग ले जाया जाएगा.

कारगिल युद्ध के दौरान और 2001-02 में पाकिस्तान के साथ सैन्य गतिरोध के समय नाभिकीय ऊर्जा को ऑपरेशन के स्तर पर लाने में भारतीय सेना को प्रोटोकोल में निर्धारित समय से कहीं अधिक समय लगा था. आज न तो सैन्य एजेंसियों के पास और न ही वैज्ञानिक एजेंसियों के पास ऐसी कार्रवाई को समन्वित करने का कोई अधिकार है. केवल प्रधान मंत्री कार्यालय के राष्ट्रीय सुरक्षा सलाहकार के पास ही यह अधिकार है कि वह सभी समन्वित फ़ैसलों के लिए संस्थागत बाधा बन सके. इसलिए हर सप्ताह समन्वित संगठनात्मक संपर्कों पर ऊपर से आरोपित हथियारों के ज़खीरे को अलग करने की स्थिति और कंप्यूटरीकृत मानक ऑपरेटिंग कार्यविधि लॉजिस्टिक विफलता के लिए भारी जोखिम पैदा करती है.

आंतर-सैन्य संगठनात्मक सहयोग

यह विडंबना है कि कमज़ोर आंतर-सैन्य सहयोग के कारण तनाव और गतिरोध की कहीं अधिक आशंका है. इसका कारण यह है कि थलसेना, वायुसेना और जलसेना ने नाभिकीय-सक्षम प्रक्षेपास्त्रों और विमान पर अपना अलग-अलग स्वतंत्र नियंत्रण बनाये रखा है और उन्हें नियंत्रित करने के लिए कोई केंद्रीय सैन्य प्राधिकरण नहीं है. तीनों सेनाओं के स्टाफ़ प्रमुख स्टाफ़ कमेटी के प्रमुखों की कमेटी में साथ मिलकर बैठते हैं और उनमें से वरिष्ठतम प्रमुख बारी-बारी से स्टाफ़ कमेटी के प्रमुखों की कमेटी (सीओएससी) की अध्यक्षता करता है. लेकिन कमेटी के अध्यक्ष को मामूली प्राधिकार ही मिलते हैं. प्रत्येक सेवा प्रमुख स्टाफ़ कमेटी के प्रमुखों की कमेटी (सीओएससी) में बराबर होता है और कोई भी दूसरी सेवा के मामले में दखल नहीं देता. इस समस्या का एक समाधान तो यह हो सकता है कि रक्षा स्टाफ़ के प्रमुख की नियुक्ति की जाए और वह स्टाफ़ कमेटी के प्रमुखों की कमेटी (सीओएससी) की अध्यक्षता करते हुए सैन्य योजनाओं का नियोजन करे और भारत की नाभिकीय ऊर्जा की कमान संभाले. लेकिन एक के बाद सत्ता में आने वाली भारत की सरकारों ने इस प्रस्ताव की अनदेखी की है.

तीनों सेवाओं में सैन्य सहयोग बनाये रखना ही समन्वित रक्षा स्टाफ़ (आईडीएस) का काम है, जो स्टाफ़ कमेटी के प्रमुखों की कमेटी (सीओएससी) के सचिवालय का काम करता है. समन्वित रक्षा स्टाफ़ (आईडीएस) के अंतर्गत ही रणनीतिक बल कमान (एसएफ़सी) रहती है, जिसका काम नाभिकीय नियोजन और समन्वय होता है. इस संगठन का निर्माण विशेष तौर पर नाभिकीय ऊर्जा के प्रबंधन के लिए ही किया गया है. यद्यपि संगठनात्मक तौर पर रणनीतिक बल कमान (एसएफ़सी) समन्वित रक्षा स्टाफ़ (आईडीएस) का ही भाग है, लेकिन कार्य की दृष्टि से इसे अलग रखा गया है. रणनीतिक बल कमान (एसएफ़सी) का कमांडर केवल स्टाफ़ कमेटी के प्रमुखों की कमेटी (सीओएससी) के अध्यक्ष को ही रिपोर्ट करता है, जिसके पास न तो नाभिकीय मामलों पर ध्यान देने का पर्याप्त समय होता है और न ही अपने सहयोगी प्रमुखों को आदेश देने का अधिकार होता है. इसके दो नकारात्मक परिणाम

होते हैं. पहला परिणाम यह होता है कि भारतीय सेना के परंपरागत और नाभिकीय हथियारों के बीच मज़बूत समन्वय नहीं होता. दूसरा परिणाम यह होता है कि नाभिकीय मामलों से संबंधित सभी आंतर-सैन्य संघर्षों को राष्ट्रीय सुरक्षा सलाहकार (एनएसए) के स्तर पर ही सुलझाया जाता है. असल में तो राष्ट्रीय सुरक्षा सलाहकार (एनएसए) ही सेना की संचालन श्रृंखला की कमान को दरकिनार करते हुए भारतीय नाभिकीय शक्तियों का वास्तविक कमांडर बन जाता है.

भारत की संचालन क्षमता की स्थिति आधा गिलास भरा हुआ और आधा गिलास खाली जैसी प्रेक्षक के दृष्टिकोण पर निर्भर करने लगती है. जो आलोचक यह मानते हैं कि गिलास आधा खाली है, नहीं समझ पाते कि भारत किस तरह अपने नाभिकीय मामलों से निपटता है और उसमें परिवर्तन कैसे होते हैं. लेकिन सरण का तर्क भी उलझा हुआ है. वह राष्ट्रीय सुरक्षा के महत्वपूर्ण मामले पर बड़े अभिमान से यह तर्क प्रस्तुत करते हैं. जब तक भारत के राष्ट्रीय सुरक्षा प्रबंधक भारत के पूरी तरह से प्राणघातक हथियारों के संचालन की समस्या को स्वीकार करके उनका समाधान नहीं कर लेते तब तक एशिया में उनके निवारण संबंधी अस्थिरता की स्थिति बनी ही रहेगी.

गौरव कम्पानी, कॉर्नेल विश्वविद्यालय से पीएचडी हैं और ओस्लो स्थित नॉर्वीजियन रक्षा अनुसंधान संस्थान, ज़ूरिख स्थित सुरक्षा अध्ययन केंद्र और वाशिंगटन स्थित रैंड कॉर्पोरेशन में अंतर्राष्ट्रीय संबंध व सुरक्षा (2013-15) *के ट्रांसऐटलांटिक पोस्ट डॉक्टरल फ़ैलो हैं. उनसे* gkampani@gmail.com *पर संपर्क किया जा सकता है.*

हिंदी अनुवादः विजय कुमार मल्होत्रा, पूर्व निदेशक (राजभाषा), रेल मंत्रालय, भारत सरकार
<malhotravk@hotmail.com>